INTERNATIONAL NEWS AND VIEW CORPORATION
INVC
अंतरराष्ट्रीय समाचार एवं विचार निगम

कहानी " जलतरंग "

By : INVC Team Published On : 26 Mar, 2018 05:24 AM IST

लेखिका " प्रतिभा "

- जलतरंग -

घोर उदासियों के गहरे कम्पन के बीच मैं डगमगाते पैरों को जमाए रखने की कोशिश कर रहा था । वक्त के तमतमाते चेहरे को पहली बार देख रहा था। मुझे लग रहा था मैं टूटी हुई तलवार लेकर युद्ध भूमि के बीचों बीच खड़ा हूँ। बिलबिलाते हुए स्याह काले रेगिस्तानों की चमकीली रेत कहीं गहरे उतर कर सागर की कोख ढूँढ रही थी।

"मैं कहाँ खड़ा हूं ।" एक बड़ा सा सवाल फन उठाए खड़ा था।

मेरी मंज़िल बची है या अस्तित्व ही खो बैठी है या फिर एक बाज़ उड़ता हुआ आया है और अपने पंजों में कुछ चमकीले मोती ले गया है और कुछ खूनी किरचें छोड़ गया है।

पर ये भी तो एक सवाल है ।

सवाल के भीतर से एक और सवाल।

समय की परतों के नीचे से निकले गठीले चीरते पलों की तरह ।

कोई आया और मुझे हिला कर चला गया ।

मैं हिला ... काँपा.... उखड़ा ..... औंधे मुँह गिरा ..... कराहा.... उचका..... और फिर सीधा खड़ा हो गया।

ठूँठ से पेड़ की तरह ..... बिल्कुल सीधा ।

इस ठूँठ की काली सूखी सतहें कभी हरी होंगी या नहीं ..... ?

फिर एक सवाल .....।

आसमान चीरता हुआ चीखता हुआ उत्तरों का एक जमघट आया भी पर धरती में समा गया।

धरती हड़बड़ा कर चौंक उठी। पल भर को काँपी पर फिर स्थिर हो गई।

नियति घूँघट निकाले झरोखे में से सब देखने की कोशिश करती रही पर चौतरफ़ा पैने त्रिशूल देखकर छुप कर सहम कर बैठ गई। त्रिशूल के तीनों शूल झट से प्रश्नचिन्ह बन कर लटक गए ।

उन प्रश्नचिन्हों की जंजीरों में लिपटा मैं अकेला नितान्त अकेला।

मैं तो एकाएक बीच सड़क से घने जंगल में धकेल दिया गया था। शूल भी साथ-साथ धकियाते रहे।

दिशाहीन , दिशाहारा , संतप्त व्यक्ति कोई उत्तर खोज पाता है भला ?

ब्रह्माण्ड में गहरे डूबते जाते पिता जी के शब्द कभी धीमे से कानों के आसपास सरसराहट बन कर पसरने लगते और कभी सारे ब्रह्माण्ड के बीच में से उभरते शोर की आवाज़ बनकर मुझे चीर डालते।

माँ की चुभती नज़रें मुझे तीर की तरह बेधती हुई सब ओर पसर रही थीं।

" बेटा , अब हम तुम्हें और नहीं पढ़ा सकते , अपने साधन खुद तलाश करो। "

माँ तो सौतेली थी ही तो क्या पिता जी भी..... ?

बिलखते हुए नाज़ुक विश्वास किरचों की तरह बिखरे पड़े थे और उनकी चुभन एक हाहाकार को जन्म दे रही थी।

मैं समझ नहीं पा रहा था पिता जी बेबस थे या उनके पिता हृदय में कोई छिद्र हो गया था और उससे होता रिसाव उन्हें सुखाए दे रहा था। हृदय शायद बस पपड़ी भर बचा था या शायद उनके हृदय के भीतर कोई शंका कुण्डली मारे बैठी थी ..... मैं नहीं जानता ।

मैं नहीं सोच पा रहा।

मैं नहीं देख पा रहा।

मैं नहीं सूँघ पा रहा।

मैं नहीं सुन पा रहा।

नहीं , न मैं अन्धा हूँ , न बहरा और न गूँगा हूँ।

मेरी व्यावहारिक बुद्धि की शायद एक सीमा है।

पर एक बात समझ आ रही है कि रिश्ते जब अविश्वास के गोल चक्करों जैसे लच्छों से उलझने लगें तो छलनी की तरह हो जाते हैं, फिर न कुछ समेट पाते हैं न सहेज पाते हैं बस रीते ही रह जाते हैं..... पहले धीरे-धीरे बिखरते हैं फिर कण - कण होते हुए हवाओं के साथ बीज की तरह इधर -उधर बिखर जाते हैं ..... लेकिन ये बीज कभी वृक्ष नहीं बनते.....गल सड़ कर मिट्टी में ही दब जाते हैं और वहीं दुर्गन्ध फैलाते रहते हैं।

मैं भी इन बेशकीमती , मीठास से भरे और गहरे रिश्तों की सड़ी लाश को ढोता हुआ दिल्ली आ गया।

बस से उतर कर सीधा होस्टल गया।

अब तक जो कमरा अपना एक छोटा सा घर , छोटी सी दुनिया लगता था वही एकाएक पथरीला परायापन लिए असहनीय खाली आँखों से घूरता रहा।

उत्साह तो पहले ही नहीं था और अब एकाएक अकेलेपन के भयावह भंवर में मैं घिरने लगा था । कमरे का कोना -कोना जैसे मुँह फेर रहा था और हवा भी बच-बच कर निकलती प्रतीत हो रही थी।

मैं चुपचाप पलंग पर औंधे मुँह पड़ा रहा और सुलगता रहा।

कुछ तो सोचना ही था।

नौकरी तलाशनी होगी।

बार - बार एक ही ख्याल आ रहा था पिता जी ऐसे कैसे कर सकते हैं ..... ? इतने बड़े संसार में यूँ भटकने के लिए छोड़ दिया जैसे किसी को मीलों तक फैले रेगिस्तान के बीचों बीच खड़ा कर हैलिकॉप्टर उड़ गया हो।

मैं सब तहस-नहस करना चाहता था।

सिर के भीतर उठती सनसनाहट की लहरें मुझे और व्यग्र किए दे रही थीं।

ख़ैर, मैं किसी तरह उस दावानल को चीर कर अपनेआपको बाहर निकाल लाया ।

गाँव के ही एक चाचा की मदद से एक नौकरी मिल गई थी। पैसे कम , मेहनत ज्यादा और समय उससे भी ज्यादा ।

मेरा पढ़ने का सपना ..... ? उसका क्या ..... ?

सम्बंधों की इस अपारदर्शिता से सहमा हुआ मैं आत्मसात करने की कोशिश कर रहा था कि मुझे ये घाव इस लिए मिले क्योंकि मैं इसके लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं था।

होस्टल की फीस दी हुई थी इसलिए बस एक सप्ताह और रुक सकता था ..... फिर ठिकाना भी ढूँढना था।

जेब की पहुँच में बस जनता फ्लैट थे जो घर कम अँधेरी गुफ़ा ज्यादा प्रतीत होते थे..... खिड़की ऐसी कि सूरज और चंदा तो झाँक भी न सकें ..... हवा भी स्वेच्छा से , निर्बाध बहती हुई नहीं आ पाती थी .... हवा भी चौखटों से टकराती हुई ही आ पाती थी ।

रसोई तो एक खुड्डी थी। जिसमें अँधेरे और घुटन का साम्राज्य था।

ख़ैर

उस तनख्वाह में वही सम्भव था।

मैं थोड़ा बहुत ज़रूरी सामान खरीद कर ले आया और उस फ़्लैट में धँस गया।

मेरे लिए यह फ़्लैट किसी धर्मशाला के कमरे की तरह था जिसमें मैं अल्पकाल के लिए ठहरने आता था और रात बिता कर सुबह होते ही कमरे को छोड़ देता था।

लेकिन फिर भी इन अँधेरों को चीरती हुई कुछ आवाज़ें.... कुछ खिलखिलाहटें ... कुछ चुहलबाज़ियाँ इधर-उधर से हवाओं के साथ आकर इस कमरे की फिज़ाओं को बदलने लगी थीं।

ये फ्लैट्स बिल्कुल सटे हुए थे .... दो फ्लैटों के बीच एक ही दीवार ..... थोड़ा सा ऊँचा बोलते ही आप जैसे पड़ोसी फ्लैट में जा खड़े होते होंऔर दूसरा भी तुम्हारे फ्लैट में साक्षात दिखाई दे रहा होता है।

चाहें तो इसे डिस्टरबैंस कह सकते हैं पर मैं नहीं कह पाता।

सच में ये आवाज़ें मेरे इस फ़्लैट के उबाऊपन को चीर कर कुछ खुशनुमा अहसासों को भीतर सरका देती थीं और मुझे पता भी नहीं लगता था।

मैं कभी-कभी मुस्कराने लगा था ।

बराबर वाले फ़्लैट में एक परिवार रहता था ....औरत की हर बात मुझे अपनी दादी की याद दिलाती थी ..... जाने कितनी बार दादी अलग-अलग रूपों में साक्षात मेरे सामने आ खड़ी होती थी।

बच्चों की हँसी की गुनगुनाहट कभी-कभी मुझे कुढ़ा जाती .... मैं सोचता कोई कैसे इतना हँस सकता है ?

फिर याद आया मुझे तो हँसे और मुस्कराए महीनों बीत गए ।

क्या हो गया हूँ मैं ..... क्या होता जा रहा हूँ ?

मुझे शिद्दत से यह अहसास हो रहा था कि पिता जी के व्यवहार के दंश को मैंने ओरा की तरह धारण कर लिया है और हर पल उसी में बँधा घूमता हूँ.... उसे कपड़ों की तरह पहनता हूँ और उसे ही बिछौना बना कर रात भर चिपका रहता हूँ ।

इस पर जब ये लोग हँसते तो मेरी कुढ़न और बढ़ जाती।

जब भी औरत आदमी को प्यार से समझाती मुझे लगता माँ पिता जी को प्यार से समझा रही है .... माँ ही चिन्ता की सब लकीरों को मिटा सकती है ... .खुशियों के अम्बार वही लगा सकती है ..... सुख की ढेरियाँ वही बना सकती है .....भीतर सुकून की फ़सल वही

उगा सकती है।

" चलो बच्चो , जल्दी होमवर्क कर लो ..... फिर डाइनिंग एरिया में आ जाना ..... खाना खाकर ड्राईंग रूम में इकट्ठे बैठ कर टी०वी० देखेंगे।"

मैं भौंचक्क ।

औरत का स्वर मेरे कमरे की हवाओं में गूँज रहा था ।

मेरा खण्डित मन उस छोटे से फ़्लैट में डाइनिंग एरिया और ड्राईंग रूम ढूँढ रहा था।

हमारे फ़्लैट तो एक ही साइज़ के हैं .... फिर जिस फ़्लैट में बैड रखने के बाद चलने फिरने की जगह भी नहीं बचती , वहाँ डाइनिंग एरिया और ड्राइंग रूम कहाँ से आ गए।

मैं फ़्लैट के बीचों बीच खड़ा हो गया और उस औरत की बातों से तालमेल बैठाने लगा।

बच्चों की हँसने खेलने की आवाजों से और खाने की स्वादिष्टता की बातें सुनकर सचमुच लग रहा था वो डाइनिंग एरिया में ही बैठे हैं।

औरत और आदमी जाने किस बात पर हँस दिए ..... लगा जैसे कोई जल तरंग बज उठा हो ..... एक संगीत से मेरा कमरा भी गुनगुनाने लगा था ..... गुनगुनाती हुई तरंगें सारे माहौल को संगीतमय बना रही थीं ..... वातावरण की इस भव्यता को मैंने पहली बार अनुभव किया था ।

माँ और पिताजी भी जब हँसते थे ऐसा ही जल तरंग मेरे घर में भी बज उठता था.....सारे सुख सब दिशाओं से भाग कर आ जाते थे और मेरे आसपास पालथी लगा कर बैठ जाते थे और मैं आनन्द विभोर हो उठता था।यही भव्यता तब भी मुझे बाँध लेती थी।

मैं एकाएक ऊँची पहाड़ियों पर पहुँच जाता था और गहरी - गहरी साँस भरने लगता था और उस सुख से अपना रोम - रोम सींच रहा होता था।

तब जीवन किसी करिश्मे से कम नहीं लगता था ।'

यहाँ वह औरत भी माँ की तरह अपनी हँसी और प्यार की मीठास से एक तिलिस्म रचे रखती है।

इच्छित दुनिया ..... पूरित आकांक्षाएँ ..... हाथों में स्वर्ग .. .... पैरों तले ज़माना..... उंगलियों में लटकते हसीन सपने ..... साकार होती उत्कण्ठाएँ .....।

मुझे लगा शायद कोई प्रयोग कर रही है वह औरत क्योंकि इस तरह के तिलिस्म वास्तविक जीवन में पलक झपकते ही ढह जाते हैं और सब ओर बस खण्डहर ही नज़र आते हैं ..... और उन खण्डहरों को स्पर्श करके आती हुई हवाएँ पूरे बदन को नोच डालती हैं..... और भीतर तक एक चुभन से दिल बेचैन हो उठता है या फिर वह अपना मानसिक संतुलन खोए हुए है या फिर किसी बीमारी से ग्रस्त है या फिर बहुत अच्छे समय को देखकर आई है और अब भी उन भुलावों में जी रही है।

मुझे लग रहा था शीघ्र ही कुछ दिनों में यह तिलिस्म चूर-चूर हो जाएगा पर लम्बे समय तक इंतज़ार के बाद भी ऐसा कुछ नहीं हुआ । जल तरंग उसी तरह गुनगुनाते रहे और सारी फ़िज़ा को महकाते रहे।

हाँ , इतना ज़रूर हो गया था कि मेरे भीतर एक गुम्बद स्थायित्व ले रहा था। जिसमें से हर पल कुछ प्रश्न , कुछ आवाज़ें कुनमुनाते हुए बाहर निकलते और मेरे सामने आ कर खड़े हो जाते ..... मैं जब कान लगाकर सुनता तो हर बार एक ही बात सुनाई पड़ती कि क्या खुशी के लिए किसी साधन अथवा प्रमाण की कोई आवश्यकता नहीं है ?

मैं हर बार निरुत्तर हो जाता क्योंकि हर बार जब मैं उत्तर देने की कोशिश करता जल तरंग बज उठते।

"चलो , चलो , जल्दी करो , मर्सिडीज़ आ गई होगी , ड्राइवर इंतज़ार कर रहा होगा , जल्दी चलो।"

मैं नहाकर ही निकला था ... . . पोंछना ही भूल गया .... भौंचक्क खड़ा रहा ..... इस औरत ने तो हद कर दी ..... कल्पनाशीलता की भी एक सीमा होती है ..... अब तक तो डाइनिंग एरिया और ड्राइंग रूम की कल्पना कर रही थी अब मर्सिडीज़ ..... जनता फ़्लैट और मर्सिडीज़ ..... दिन में जाने कितनी बार महल बनाती है ।

मैं पोंछना भूल गया और ऐसे ही कपड़े पहन लिए । बाहर कोरिडोर में आया तो वह औरत दोनों बच्चों को जल्दी-जल्दी ले जा रही थी।

मैं पीछे - पीछे हो लिया।

नुक्कड़ पर एक रिक्शा था। जिसमें एक बड़ा सा बैंच रखा था। जिससे रिक्शा में कम से कम छः बच्चे बैठ सकते थे। मैंने सिर पीट लिया।

बच्चों को रिक्शा पर चढ़ाकर लौटते हुए उस औरत के चेहरे की निर्द्वन्द्वता..... चाल की निश्छलता ..... होठों की मुस्कान की निरीहता ..... आँखों में निर्मित विश्वास के महल मुझे पराजित कर रहे थे ।

उसके तिलिस्म को बिखरते हुए देखने का मेरा इन्तज़ार जितना लम्बा हो रहा था उसका तिलिस्म उतना ही ताकतवर हो रहा था..... उस कल्पनाजीवी औरत के विश्वास के महलों के आगे मेरे यथार्थ के महल काँपते नज़र आ रहे थे ..... कुछ चकनाचूर होकर बिखर रहा था।

वह औरत अभी भी जल तरंगों के संगीत में आकण्ठ डूबी हुई थी ।

मैं उस अचम्भित मनः स्थिति के साथ ही ऑफिस चला गया ।

जब मैं देर रात लौटा तब तक पूरा परिवार सो चुका था । मेरा कमरा एक अजीब सी ऊबाउ घुटन से घिरा था ..... चाँदनी खिड़की से अन्दर आने की कोशिश करके हार चुकी थी..... हवा घायल अवस्था में खिड़की की चौखट पर पसर चुकी थी ।

पर मुझे पूरा विश्वास है कि वह परिवार चाँदनी के आगोश में मस्त सोया होगा और उस खिड़की से निर्बाध बहती हवा उन्हें थपकियाँ देकर सुला रही होगी।

परिचय -:

प्रतिभा

लेखिका व् शिक्षिका

हरियाणा में जन्मी कहानीकार प्रतिभा की कहानियाँ देश की अनेक महत्त्वपूर्ण पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं । हंस ,परिकथा , कथाक्रम , पल प्रतिपल , हरिगंधा , विभोम स्वर , इन्द्रप्रस्थ भारती , अभिनव इमरोज़ , ककसाड़ जैसी स्तरीय पत्रिकाओं में इनकी कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं । साथ ही ऑनलाइन साहित्यिक पत्रिकाओं प्रतिलिपि , मातृभारती , हमरंग , शब्दांकन में भी इनकी कहानियाँ पढ़ी जा सकती हैं । न्यूज़ीलैंड से प्रकाशित होने वाली हिन्दी साहित्य की पत्रिका 'गुलदस्ता ' में इनकी कई कहनियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं ।

समाज में व्याप्त असमानता तथा शोषण इनकी कहानियों का मूल स्वर है । सम्बन्धों का बढ़ता खोखलापन , बदलते दृष्टिकोण , परिवर्तित होते आधुनिक संदर्भ , निरंतर संघर्ष करती तथा समाज से जूझ कर अपने रास्ते तलाशती नारी का भावचित्र इनकी कहानियों के विषय है ।

इनके दो कहानी संग्रह हैं - 1. .तीसरा स्वर . 2. अभयदान

पुरस्कार -: " तीसरा स्वर " पर इन्हें " हरियाणा साहित्य अकादमी " से पुरस्कार प्राप्त हो चुका है । 2008 में साहित्य सभा कैथल की ओर से प्रतिभा जी को रमाबाई स्मृति सम्मान से सम्मानित किया गया ।

सम्प्रति - : दिल्ली में रहती हैं और अध्यापन कार्य कर रही हैं ।

संपर्क -: pratibha.kmr26@gmail

URL : https://www.internationalnewsandviews.com/story-jaltarng/

INTERNATIONAL NEWS AND VIEW CORPORATION
INVC
अंतरराष्ट्रीय समाचार एवं विचार निगम

12th year of news and views excellency

Committed to truth and impartiality

Copyright © 2009 - 2019 International News and Views Corporation. All rights reserved.